A Pratibha Spandan Journal

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320-7175 (O) | Volume 14, Issue 01, January-June, 2026

पश्चिमी राजस्थान के प्रमुख लोकसंगीत समुदायों की सांगीतिक परम्परा का तुलनात्मक अध्ययन

Pawan Gharu[1], Dr. Swati Sharma[2]

1 Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur

2 Assistant Professor, Jai Narain Vyas University, Jodhpur

Read the Article Online

Cite this Article

Published on 30 April, 2026

Gharu, P., Sharma, S. (2026). Pashchimi Rajasthan Ke Pramukh Loksangeet Samudayon Ki Sangitik Parampara Ka Tulnatmak Adhyayan. Swar Sindhu, 14(1), 128-131.

सार

पश्चिमी राजस्थान की लोकसंगीत परम्परा भारतीय सांस्कृतिक विरासत का एक महत्वपूर्ण अंग है। इस क्षेत्र में निवास करने वाले लंगा, मांगणियार, ढोली, ढाढी, जोगी, मिरासी एवं राणा समुदायों ने अपनी विशिष्ट गायन शैलियों, वादन परम्पराओं तथा मौखिक संगीत शिक्षा के माध्यम से लोकसंगीत को समृद्ध बनाया है। इन समुदायों की सांगीतिक परम्पराएँ केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं हैं, बल्कि लोकजीवन, धार्मिक आस्था, सामाजिक परम्पराओं एवं सांस्कृतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति भी हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में पश्चिमी राजस्थान के प्रमुख लोकसंगीत समुदायों की सांगीतिक परम्पराओं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन में गायन शैली, रागात्मक स्वरूप, लोकवाद्यों, प्रस्तुति परम्परा तथा गीतों की विषयवस्तु के आधार पर इन समुदायों की समानताओं एवं भिन्नताओं का विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि इन लोकसंगीत समुदायों ने राजस्थान की सांगीतिक परम्परा को विशिष्ट पहचान प्रदान की है।

मुख्य शब्द: पश्चिमी राजस्थान, लोकसंगीत, लोकगायक समुदाय, सांगीतिक परम्परा, लोकसंस्कृति, तुलनात्मक अध्ययन

प्रस्तावना

राजस्थान का लोकसंगीत अपनी विविधता, भावप्रधानता तथा सांगीतिक समृद्धि के कारण विशेष महत्व रखता है। पश्चिमी राजस्थान का मरुस्थलीय क्षेत्र लोकगायन एवं लोकवादन की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध माना जाता है। यहाँ की लोकसंगीत समुदायों ने पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक परम्परा के माध्यम से संगीत को जीवित रखा है। लंगा, मांगणियार, ढोली, ढाढी, जोगी, मिरासी एवं राणा समुदाय पश्चिमी राजस्थान की प्रमुख संगीतजीवी जातियाँ हैं, जिनकी गायकी में लोकजीवन, भक्ति, वीरता, श्रृंगार तथा सामाजिक चेतना का समन्वय दिखाई देता है।

इन समुदायों की सांगीतिक परम्पराएँ केवल गीतों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इनके साथ विशिष्ट लोकवाद्य, प्रस्तुति शैली एवं गायन पद्धति भी जुड़ी हुई है। प्रत्येक समुदाय की अपनी स्वतंत्र सांगीतिक पहचान है, जो उसे अन्य समुदायों से भिन्न बनाती है। प्रस्तुत शोध-पत्र में इन समुदायों की सांगीतिक परम्पराओं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

लंगा समुदाय की सांगीतिक परम्परा

लंगा समुदाय पश्चिमी राजस्थान के प्रमुख लोकगायक समुदायों में से एक है। इनकी गायकी में सूफीयाना भाव, आलाप प्रधान शैली तथा स्वर माधुर्य विशेष रूप से दिखाई देता है। इनके गीतों में प्रेम, लोकदेवताओं एवं लोकदेवियों की स्तुति, लोककथाएँ तथा मरुस्थलीय जीवन की अनुभूतियाँ व्यक्त होती हैं। लंगा समुदाय हिंदू एवं मुस्लिम दोनों धर्मों में आस्था रखता है तथा सांस्कृतिक समन्वय की भावना इनके संगीत में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

लंगा समुदाय की संगीत परम्परा गुरु-शिष्य पद्धति एवं मौखिक परम्परा पर आधारित है। ये औपचारिक रूप से अधिक शिक्षित नहीं होते, फिर भी दोहे, लोकछंद एवं पारम्परिक रचनाओं का गहन ज्ञान रखते हैं। ऐतिहासिक रूप से राजपूत एवं सिंधी सिपाही इनके प्रमुख संरक्षक माने जाते रहे हैं।

इनकी प्रमुख उपजातियाँ सारंगिया लंगा एवं सुरणइया लंगा हैं। सारंगिया लंगा गायन एवं सारंगी वादन दोनों में दक्ष होते हैं, जबकि सुरणइया लंगा वादन परम्परा में विशेष निपुणता रखते हैं। सिंधी सारंगी, सुरिन्दा, अलगोजा, मोरचंग, मुरला, सतारा तथा खड़ताल इनके प्रमुख वाद्य हैं। मांड

गायकी के संरक्षण एवं संवर्धन में लंगा समुदाय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अपनी गायकी में ये मुर्की एवं तानों का प्रभावी प्रयोग करते हैं, जिससे इनके संगीत में विशेष भावपूर्णता एवं आकर्षण उत्पन्न होता है।

मांगणियार समुदाय की सांगीतिक परम्परा

मांगणियार समुदाय राजस्थान की लोकगायन परम्परा में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इनकी गायकी में लोक एवं शास्त्रीय संगीत का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। मांड गायकी इनकी प्रमुख शैली है, जिसमें स्वर माधुर्य एवं भावपूर्ण प्रस्तुति विशेष रूप से दृष्टिगत होती है। इनके गीतों में विवाह, जन्मोत्सव, वीरगाथाएँ, लोकदेवताओं की स्तुति तथा ऋतु-वर्णन प्रमुख रूप से मिलते हैं।

मांगणियार समुदाय हिंदू एवं मुस्लिम दोनों परम्पराओं को अपनाता है, जो सांप्रदायिक सौहार्द का प्रतीक है। यह समुदाय स्वयं को राजपूत वंश से संबंधित मानता है तथा राठौड़, भाटी एवं सिंधी मुस्लिम जजमानों को अपना संरक्षक स्वीकार करता है। इनके गीतों में राजपूत वीरों की वीरगाथाओं का वर्णन विशेष रूप से मिलता है। ये अपने जजमानों के शुभ अवसरों पर प्रस्तुति देते हैं तथा उनकी वंशावली के संरक्षक भी माने जाते हैं। प्राचीन काल में ये डिंगल काव्य के पाठ में भी दक्ष थे।

कमायचा इनका प्रमुख एवं विशिष्ट वाद्य है। इसके अतिरिक्त ढोलक, खड़ताल, सुरमण्डल, अलगोजा, मोरचंग, इकतारा तथा हारमोनियम का भी प्रयोग किया जाता है। इनकी संगीत परम्परा जजमानी एवं गुरु-शिष्य परम्परा पर आधारित है तथा इस समुदाय की महिलाएँ भी गायन कला में दक्ष होती हैं।

ढोली समुदाय की सांगीतिक परम्परा

ढोली समुदाय राजस्थान का एक प्रमुख पारंपरिक लोकसंगीत एवं वादन समुदाय है। ऐतिहासिक रूप से इनका संबंध विवाह, उत्सव एवं सामाजिक आयोजनों में गायन-वादन से रहा है। 'ढोली' नाम ढोल वाद्य के वादन से संबंधित माना जाता है। यह समुदाय राजदरबारों, ग्राम्य उत्सवों तथा मांगलिक अवसरों पर अपनी कलात्मक प्रस्तुतियों के लिए प्रसिद्ध रहा है।

ढोली कलाकार ढोल, नगाड़ा, शहनाई, सारंगी, ढोलक एवं तबला जैसे वाद्यों के कुशल वादक होते हैं। इनके वादन में लय, उत्साह एवं लोकजीवन की जीवंतता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उनकी महिलाएँ लोकगीत, मंगल गीत एवं विवाह गीतों के गायन में विशेष दक्ष मानी जाती हैं। यह समुदाय गुरु-शिष्य परम्परा के माध्यम से अपनी सांगीतिक परम्परा को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षित करता आया है। राजस्थान की लोकसांगीतिक परम्परा को समृद्ध एवं संरक्षित बनाने में इस समुदाय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

ढाढी समुदाय की सांगीतिक परम्परा

ढाढी समुदाय राजस्थान का एक पारंपरिक लोकगायक समुदाय है, जिसका मुख्य कार्य गायन, वादन एवं वंशावली वाचन रहा है। इस समुदाय के कलाकार सारंगी, रावणहत्था, चिकारा एवं अन्य लोकवाद्यों के साथ लोककाव्य, वीरगाथाएँ तथा डिंगल काव्य का गायन करते हैं। इनके गायन में शौर्य, इतिहास एवं लोकसंस्कृति का प्रभावी समन्वय दिखाई देता है।

ढाढी समुदाय में हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों परम्पराएँ पाई जाती हैं, जो सांस्कृतिक समन्वय का सुंदर उदाहरण है। विवाह एवं मांगलिक अवसरों पर विरुदावली, प्रशस्ति गीत तथा लोकगीत प्रस्तुत करना इनकी प्रमुख विशेषता रही है। 'ढोला-मारू' जैसे लोककाव्यों के संरक्षण एवं प्रसार में इनका महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है। प्राचीन समय में यह समुदाय राजपूत शासकों एवं जजमानों की वंशावली तथा वीरता का गायन कर सामाजिक-सांस्कृतिक परम्पराओं को जीवित रखने का कार्य करता था।

जोगी समुदाय की सांगीतिक परम्परा

जोगी समुदाय की सांगीतिक परम्परा मुख्यतः भक्ति, आध्यात्मिकता एवं लोकगाथाओं से जुड़ी हुई है। इनके गीतों में संत परम्परा, लोकदेवताओं तथा धार्मिक कथाओं का प्रमुख स्थान होता है। यह समुदाय भर्तृहरि, गोपीचंद, निहालदे सुल्तान, ढोला-मारू तथा शिवजी के ब्यावलों का भावपूर्ण गायन करता है। इनके गायन में भक्ति, वैराग्य एवं लोकजीवन की गहरी अनुभूति दिखाई देती है।

यह समुदाय अपनी उत्पत्ति भगवान शिव से मानता है। प्रारम्भिक समय में कठोर योग-साधना करने के कारण इन्हें 'जोगी' कहा गया। गेरुए वस्त्र धारण करना, कानों में कुंडल पहनना तथा भस्म का तिलक लगाना इनकी प्रमुख पहचान मानी जाती है। यह समुदाय शिव की विशेष आराधना करता है तथा लोकभक्ति परम्परा को जीवित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

इकतारा, जोगिया सारंगी, मशक, सींगी, चिकारा, रावणहत्था तथा डमरु इनके प्रमुख वाद्य हैं। राजस्थान की लोकगाथाओं एवं भक्ति संगीत के संरक्षण और प्रसार में जोगी समुदाय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

मिरासी समुदाय की सांगीतिक परम्परा

मिरासी समुदाय पारम्परिक रूप से गायन, वादन एवं वंशावली गायन से संबंधित रहा है। इनकी गायकी में लोककथात्मकता, श्रृंगारिक भाव तथा मांड गायकी की प्रमुखता दिखाई देती है। मिरासी कलाकार सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवसरों पर गीत प्रस्तुत करते रहे हैं। इस समुदाय में महिलाएँ भी पुरुषों के साथ गायन में सहभागी होती हैं, जिससे इनके सामूहिक लोकसंगीत की परम्परा और अधिक समृद्ध दिखाई देती है।

बनिया, ब्राह्मण, राजपूत, पठान एवं सैयद इनके प्रमुख जजमान माने जाते हैं। यह समुदाय मुख्यतः गायन, तबला वादन, सारंगी वादन तथा लोकनाट्य प्रस्तुतियों में दक्ष माना जाता है। तबला, हारमोनियम, सारंगी एवं ढोलक इनके प्रमुख वाद्य हैं। विशेष रूप से तबला वादन एवं मांड गायकी ने मिरासी समुदाय को लोकसंगीत में विशिष्ट पहचान प्रदान की है। मांड गायन में दोहों की प्रधानता होती है, जिनका भावपूर्ण एवं लयात्मक प्रस्तुतीकरण मिरासी कलाकारों की विशेषता माना जाता है। राजस्थान की मांड परम्परा को जीवित एवं संरक्षित रखने में इस समुदाय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

राणा समुदाय की सांगीतिक परम्परा

राणा समुदाय राजस्थान में पारंपरिक रूप से नगाड़ा वादन, शहनाई संगत एवं लोकगायन के लिए प्रसिद्ध रहा है। मान्यता है कि युद्ध (रण) में "धुसा" अथवा नगाड़े पर चोट करने के कारण इन्हें "राणा" कहा गया। यह समुदाय विशेष रूप से नगाड़ा वादन के साथ गायन-वादन की परम्परा से जुड़ा रहा है।

राणा समुदाय अपनी उत्पत्ति राजपूतों से मानता है तथा अनेक सामाजिक रीति-रिवाजों एवं जीवन शैली में राजपूत परम्पराओं का अनुसरण करता है। राजपूतों के विवाह एवं मांगलिक अवसरों पर इस जाति का पारंपरिक "नेक" बंधा हुआ माना जाता है, जिसके अंतर्गत ये विशेष रूप से नगाड़ा, शहनाई एवं ख्याल गायन की प्रस्तुति देते हैं।

शेखावाटी क्षेत्र में राणा कलाकार नगाड़ा वादन में अत्यंत दक्ष माने जाते थे तथा राजपूत ठिकानेदारों के संरक्षण में कार्य करते थे। विवाह, ख्याल गायन एवं सामाजिक आयोजनों में इनका महत्वपूर्ण सांगीतिक योगदान रहा है। शादी-विवाह के अवसरों पर ये शहनाई एवं ख्याल गायन के साथ नगाड़ा वादन प्रस्तुत करते हैं, जिससे उत्सवों में विशेष लोकसांगीतिक वातावरण निर्मित होता है। इनके वादन में लय, उत्साह एवं पारंपरिक लोकसंस्कृति की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

सांगीतिक परम्पराओं का तुलनात्मक अध्ययन

पश्चिमी राजस्थान के लंगा, मांगणियार, ढोली, ढाढी, जोगी, मिरासी एवं राणा समुदायों की सांगीतिक परम्पराओं में अनेक समानताओं के साथ विशिष्ट भिन्नताएँ भी दृष्टिगत होती हैं। सभी समुदायों की संगीत परम्परा मुख्यतः गुरु-शिष्य पद्धति एवं मौखिक परम्परा पर आधारित रही है, जिसके माध्यम से लोकसंगीत पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षित होता आया है।

लंगा एवं मांगणियार समुदायों की गायकी में रागात्मकता, स्वर माधुर्य तथा शास्त्रीय तत्वों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। लंगा समुदाय सूफीयाना भाव एवं आलाप प्रधान शैली के लिए प्रसिद्ध है, जबकि मांगणियार समुदाय मांड गायकी, वीरगाथाओं तथा कमायचा वादन के लिए विशेष पहचान रखता है। दोनों समुदाय जजमानी परम्परा एवं सांस्कृतिक समन्वय के प्रतीक माने जाते हैं।

जोगी समुदाय की गायकी भक्ति, वैराग्य एवं लोकगाथाओं पर आधारित है। यह समुदाय भर्तृहरि, गोपीचंद, निहालदे सुल्तान तथा शिवजी के ब्यावलों का गायन करता है। दूसरी ओर मिरासी समुदाय मांड गायकी, तबला वादन एवं लोकनाट्य प्रस्तुतियों के लिए प्रसिद्ध है, जिसमें श्रृंगारिकता एवं लोककथात्मकता का विशेष प्रभाव दिखाई देता है।

ढोली समुदाय मुख्यतः लोकवाद्य वादन, मंगल गीत एवं विवाह समारोहों से जुड़ा रहा है। ढोल, नगाड़ा एवं शहनाई वादन में इनकी विशेष दक्षता मानी जाती है। वहीं ढाढी समुदाय वीरगाथाओं, विरुदावली एवं वंशावली गायन में विशेष निपुण माना जाता है। राणा समुदाय नगाड़ा वादन, शहनाई संगत एवं ख्याल गायन परम्परा के लिए प्रसिद्ध रहा है तथा इसका संबंध राजपूत ठिकानों एवं मांगलिक अवसरों से विशेष रूप से जुड़ा रहा है।

इस प्रकार सभी समुदाय अपनी विशिष्ट गायन शैली, वाद्य परम्पराओं एवं सांस्कृतिक विशेषताओं के माध्यम से पश्चिमी राजस्थान की लोकसंगीत परम्परा को समृद्ध, जीवंत एवं संरक्षित बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं।

निष्कर्ष

पश्चिमी राजस्थान के लंगा, मांगणियार, ढोली, ढाढी, जोगी, मिरासी एवं राणा समुदायों ने लोकसंगीत की समृद्ध परम्परा को विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया है। इन समुदायों की गायकी, वादन शैली एवं प्रस्तुति परम्परा राजस्थान की सांस्कृतिक पहचान का महत्वपूर्ण आधार है। इनके संगीत में लोकजीवन, आस्था, सामाजिक चेतना एवं सांस्कृतिक मूल्यों का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि प्रत्येक समुदाय की अपनी स्वतंत्र सांगीतिक विशेषताएँ हैं, किंतु सभी समुदाय सामूहिक रूप से पश्चिमी राजस्थान की लोकसंगीत परम्परा को समृद्ध बनाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

कल्ला, वंदना। (2014)। राजस्थान के लोक तत वाद्य।

सिंह, हरदयाल। (1891)। मरदुमशुमारी राजमारवाड़ रिपोर्ट: राजस्थान की जातियों का इतिहास एवं रीति-रिवाज। प्रस्तावना: जहूरखां मेहर। महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध केंद्र, जोधपुर।

कोठारी, कोमल। Monograph on Langas। राजस्थान संगीत नाटक अकादमी, जोधपुर।

शर्मा, भगवती लाल। राजस्थान की सांस्कृतिक परंपरा। राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।

सुथार, भूराराम। (2008)। जैसलमेर के श्रृंगारिक लोकगीत। अंकुर प्रकाशन, उदयपुर।

सामर, देवीलाल एवं वर्मा, गींडाराम। (2019)। राजस्थान का लोक संगीत। भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर।

गहलोत, जगदीश सिंह। (1998)। मारवाड़ के ग्राम गीत। राजस्थानी ग्रंथागार।

Samiuddin, Abida, Khanam, R. (2008)। Global Encyclopaedic Ethnography of Indian Muslim (Vol. 2)। Global Vision Publishing House.

Gurawa, Anju, & Chauhan, Vipin Singh. (2021)। Literary analysis of the oral folk songs traditions of Dholi community in Rajasthan. International Journal of Applied Research, 7(2).

Ayyagari, Shalini R. (2016)। Musical Resilience: Performing Patronage in the Indian Thar Desert। Oxford University Press.